The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 6 | June 2025
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

भारतीय राष्ट्रवाद में स्वामी दयानंद सरस्वती का योगदान

यशवीर सिंह (शोध छात्र)

डॉ. विकास रंजन कुमार (सहायक आचार्य)

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बाजपुर उत्तराखण्ड , ई-मेल-Yash71989@gmail.com

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.15861900

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 27-06-2025

Published: 10-07-2025

Keywords:

आक्रामक राष्ट्रवाद, कुरीतियाँ, भारतीय पुनर्जागरण, आर्यसमाज, स्वराज, रुढ़ियाँ, वहिष्कार, सती प्रथा, स्वदेशी, राष्ट्रीय चेतना, गुरुकुल गरिमा, शिल्पकार उग्रवादी ।

ABSTRACT

आक्रामक राष्ट्रवाद के प्रणेता स्वामी दयानंद सरस्वती के विचारों का अध्ययन राष्ट्रीय पुनर्जागरण के संदर्भ में आवश्यक है। उन्होंने ऐसे समय में भारतीयों में उत्साह, आत्मगौरव व विश्वास का संचार किया, जब भारतीय आमजन आत्मग्लानि, हीनता एवं कायरता से ग्रसित था। स्वामी दयानंद के कार्यों ने न केवल सामाजिक व धार्मिक आंदोलनों को गति प्रदान की अपितु भारतीयों को राष्ट्रीय भावना से भी उत्सर्जित किया। वेदों में संचित ज्ञान व दर्शन की सर्वोच्चता का आव्हान कर स्वामी जी ने राष्ट्रीय अस्मिता को पुनर्जीवित करने का महान कार्य किया। वे सामाजिक व धार्मिक कुरीतियों का खण्डन कर देश में सामाजिक जागृति के अग्रदूत बने। यह कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगा कि उनके सामाजिक-धार्मिक विचारों की अभिव्यक्ति ने आक्रामक राष्ट्रवाद का मार्ग प्रशस्त किया। महत्वपूर्ण है कि दयानंद सस्वती ने प्रत्यक्षतः राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में सहभागिता नही की, परन्तु उनके लेखों, भाष्यों व चर्चाओं में प्रकट सामाजिक व धार्मिक विचारों ने राष्ट्रीय चेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। प्रस्तुत शोध पत्र में स्वामी दयानंद सरस्वती के राष्ट्रीय पुनर्जागरण एवं प्रखर राष्ट्रवाद के संदर्भ में योगदान के विश्लेषण का प्रयास है।

परिचय

स्वामी दयानंद सरस्वती के सामाजिक एवं राजनीतिक विचारों का परीक्षण एवं मूल्यांकन किए विना 19वीं शताब्दी के भारत एवं राष्ट्रीय आंदोलन का अध्ययन अपूर्ण रहेगा। स्वामी जी आध्यात्मिक चिंतक होने के साथ-साथ सामाजिक एवं धार्मिक सुधारक भी थे।

यदपि वे प्लेटों एवं अरस्तू के समान राजनीतिक विचारक नहीं थे, फिर भी उनके विचार भारतीय राष्ट्रवाद के उद्भव एवं विकास में उपयोगी सिद्ध हुए। उनका मानना था कि देश में विद्यमान सामाजिक व धार्मिक बुराइयों को दूर किए विना, भारत में राष्ट्रवादी विचारधारा को उन्नत नही बनाया जा सकता।

वैदिक स्वराज का आह्वाहन

स्वामी दयानंद सरावती ने आर्य समाज की स्थापना के साथ ही भारतीय सामाजिक-धार्मिक आंदोलनों को नवजीवन प्रदान किया। आर्य समाज आंदोलन स्वधर्म, स्वभाषा, स्वदेशी एवं स्वराज इन स्तम्भों पर आधारित रहा है।[1] उसकी स्वदेशभक्ति की आदर्श-प्रेम तथा बंधुत्व के ऊपर आधारित है और वह राष्ट्र की एकता से परे समूची मानवता के कल्याण की कामना करता है। यह एकता बंधुत्व, समान तथा स्वतंत्र मनुष्य की एकता है- स्वामी, दास और शोषक, शोषित की थोपी गई एकता नही।[2] स्वराज प्राप्ती के पूर्व ही स्वामी दयानंद ने 'सत्यार्थ प्रकाश' में सच्चे स्वराज का स्वरूप प्रस्तुत कर दिया था। 'सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में उन्होंने लिखा है कि आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड स्वतंत्र स्वाधीन व निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है, वह विदेशी ताकतों के अधीन है, कुछ थोड़े तथा स्वतंत्र है। दुर्दिन जब आता है, देशवासियों को अनेक प्रकार का कष्ट भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है।[3] इस प्रकार स्वामी जी ने सुराज व स्वराज के मध्य भेद दर्शाया। स्वामी दयानंद द्वारा प्रज्ज्वलित स्वराज की मशाल ने भारतीयों में राष्ट्र प्रेम व राजनीतिक चेतना को आवश्यक बना दिया।

वेदों की ओर लौटो

भादीय राष्ट्रवाद को सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक दृष्टिकोण से नवीन दिशा प्रदान कर स्वामी दयानंद ने भारतीय समाज व राष्ट्रीय अस्मिता को पुनर्जिवीत करने का महान कार्य किया। उन्होंने इस्लाम व ईसाइयत के प्रहारों से हिंदुत्व को संरक्षण प्रदान कर राष्ट्रीय अस्मिता को क्षीण होने से बचाया। उनका स्पष्ट विचार था कि "आर्य विशिष्ट जाति है, वेद विशिष्ट ग्रंथ है, आर्यवर्त विशिष्ट भूमि

है।"[4] उनका मानना था कि किसी भी विदेशी मत को स्वीकार करने से राष्ट्रीय भावना क्षीण होती है। यही कारण रहा कि स्वामी दयानंद ने विदेशी शक्तियों के भारतीय धार्मिक व सांस्कृतिक मामलों में हस्तक्षेप करने का प्रबल विरोध किया। इस संदर्भ में वैलेंटाइन शिरोल ने कहा है कि, "दयानंद की शिक्षाओं की मूल प्रवृत्ति का सुधार करने की उतनी नहीं है, जितनी कि उसे विदेशी प्रभावों के विरुद्ध प्रतिरोध के लिए संगठित करने की है जो उनके विचारों में इसका भी राष्ट्रीयकरण कर रहे हैं।"[5] इसलिए दयानन्द ने 'वेदों की ओर लौटो' का नारा दिया। जेम्स हेस्टिंग्स ने उन्हें भारत में आध्यात्मिक जागृति का मार्टिन लूथर माना है।[6] जिस प्रकार मार्टिन लूथर ने सत्य के सहारे बाइबिल के सिद्धांतों को अपनाया, उसी प्रकार दयानंद ने सनातन सत्य को वेद-ज्ञान के अनुसार जीवन में उतारा।

आर्यावर्त आर्यो के लिए

'आर्यावर्त आर्यो के लिए' दयानंद स्वामी के इस संदेश को 1903 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कोलकाता अधिवेशन में 'भारतवर्ष भारतीयों के लिए' के रूप में दोहराया गया। स्वामी जी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखा है कि "यह आर्यावर्त देश ऐसा है जिसके सदृश्य भूगोल में दूसरा

देश नहीं है। आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणी है जिसको लोहे रूपी विदेशी छूते ही सुवर्ण अर्थात धनाढय हो जाते हैं।[7] अपनी आर्यावर्त आर्यो के लिए अवधारणा को स्वामी दयानंद ने अपने ग्रंथों, लेखो, भाषणों एवं चर्चाओं के माध्यम से आमजन तक पहुँचाया। जिसने लोगों में राष्ट्रवादी विचारधारा को तीव्र बनाने का कार्य किया।

राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रचार

सर्वप्रथम स्वामी दयानंद के मस्तिष्क में, इस विचार ने जन्म लिया कि भारत की प्रादेशिक भाषाओं की लिपि हो अर्थात देवनागरी लिपि। आर्य भाषा हिंदी का भारत में नहीं अपितु अन्य राष्ट्रों में भी प्रचार-प्रसार कर स्वामी दयानंद ने राष्ट्र सेवा की। इसी क्रम में आर्य समाज ने राष्ट्रभाषा को समृद्ध करने वाले अनेक विद्वान, लेखक, साहित्यकार कवि, आलोचक, पत्रकार प्रदान किए।[8] इसका परिणाम यह रहा कि प्राचीन व धार्मिक ग्रंथो का सर्वराष्ट्रवादी दृष्टिकोंट सामने आया। दयानंद के वैचारिक आंदोलन में हिंदी प्रेमियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। न केवल उत्तर भारत वल्कि दक्षिण भारत में भी आर्य समाज के कार्यकर्ताओं ने हिंदी के प्रचार अभियान को सफल बनाया। यह आर्य समाज के कार्यकर्ताओं का संकल्प था कि उन्होंने विदेशों में भी हिंदी को जीवित जागृत संपर्क भाषा के रूप में बनाए रखा।

स्वदेशी एवं बहिष्कार आंदोलन

स्वदेशी व बहिष्कार आंदोलन को मुख्य आधार बंगाल विभाजन के पश्चात मिला। यद्यपि स्वामी दयानंद ने बहुत पहले ही इसकी चर्चा की थी। उनका विश्वास था कि राष्ट्रवाद का मार्ग स्वदेशी व बहिष्कार से होकर गुजरता है। वे इस तथ्य से सुपरिचित थे कि स्वदेशी व बहिष्कार से भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाया जा सकता है। मार्च, 1883 में जोधपुर के महाराज को स्वामी दयानंद ने स्वदेशी वस्त्र उद्योग की सहायता प्रदान करने की सलाह दी, परिणामस्वरुप संपूर्ण राज्य में खादी का प्रयोग बढ़ने लगा। जिस भावना से प्रेरित होकर उन्होंने स्वदेशी का नारा दिया था,सन 1905 में बंगाल विभाजन से उत्पन्न परिस्थितियों ने देशवासियों के समक्ष उसकी महत्ता स्पष्ट कर दी।[9]

स्वामी दयानंद व आर्य समाज का भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन पर प्रत्यक्ष प्रभाव उग्र राष्ट्रवाद के रूप में देखा जा सकता है। न केवल लाल, वाल, पाल की त्रिमूर्ति स्वामी दयानंद की शिक्षाओं से प्रभावित थी, अपितु खरपड़े एवं अरविंद घोष जैसे उग्रवादी नेता तो महर्षि से भी दो कदम आगे बढ़ गए। “मेरी राय में तो वेद उस सत्य ज्ञान की अमूल्य निधि है जो आधुनिक विश्व को अभी तक उपलब्ध नहीं हो सका है। स्वामी दयानंद के दाने अंतरंजित न होकर, न्यूनान्तिपून ही है।”[10]

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1-सिंह, विजेन्द्र पाल, 'भारतीय राष्ट्रवाद एवं आर्यसमाज, शोध लेख, 'लोकतंत्र समीक्षा' अंक-2, (नई दिल्ली, संविधानिक तथा संसदीय अध्ययन संस्थान), अप्रैल-जून, 1974, पृ. 272

2-मूलर, एफ., मैक्स, 'दशानन्द सरस्वती-जीवन परिचय',न्यूयोर्क, सी. सिकनवनर्स संस, 1884

3-दयानंद स्वामी, 'सत्यार्थ प्रकाश', (अजमेर, वैदिक यंत्रालय), 1973, पृ. 149

4-मैकडोनाल्ड, जे. रेमसे, दी अवेकनिंग ऑफ इण्डिया, हॉडर एण्ड स्टॉग्टन, लंदन, 1943, पृ. 37

5-शिरोल, सर वेलेन्टाइन, इण्डियन अनरेस्ट, मैकमिलन एण्ड कं. लि., लंदन, 1910, पृ. 177

6-हेस्टिंग्स, जेम्स, (सम्पा) ,'एन्साइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एण्ड एथिक्स', खण्ड-2. स. 7. पृ- 58-59

7-दयानंद, स्वामी, 'सत्यार्थ प्रकाश' पृ- 172

8-'लाल, लक्ष्मीनारायण, "हिन्दी भाषा और साहित्य को आर्यसमाज की देन", पीएच.डी. शोध प्रबंध, लखनऊ वि.वि., 1961

9-'आर्य गजट', 21 सितम्बर, 1905

10-घोष, अरांर्वेद, "बंकिर-तिलक-दयानंद", (पाण्डिचेरी, श्री अरविंद आश्रम), 1943, पृ- 98